प्रश्न — भ्रमरगीत लेखन में सूरदास का क्या उद्देश्य है? इसमें आये सगुण तथा निर्गुण सम्बन्धी तर्कों का विवेचन कीजिये।

अथवा — भ्रमरगीत में निर्गुण का खंडन और सगुण का मंडन

उत्तर — किसी रचना के प्रणयन में प्रणेता का कोई न कोई उद्देश्य होता है। उद्देश्य प्राप्ति के हेतु ही वह अपनी अन्तर्वृत्तियों को साकार रूप रचना में संगठन होता है अपने संकल्प की सिद्धि के आधार उसकी प्रवृत्ति लाभ करती है। भ्रमरगीत के आद्योपान्त अध्ययन से स्पष्ट लक्षित होता है कि इसके प्रणयन में सूरदास का मुख्य उद्देश्य निर्गुण का खंडन और सगुण का मंडन तथा ज्ञान के अपेक्षा भक्ति की श्रेष्ठता का प्रतिपादन रहा है।

दूसरी बात यह है कि साम्प्रदायिकता की छाप अनिवार्य है। जैसा कि हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध समीक्षक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी कहा है — " वे अपार छाप में हैं। इन्होंने अनन्य उपासना के अनुसार कृष्ण या हरि को छोड़कर और देवताओं की स्तुति नहीं की है।"

सूरदास वल्लभाचार्य के सिद्धान्त में थे। वल्लभाचार्य की उपासना माधुर्य भाव की उपासना थी। इनके उपास्य प्रेममूर्ति कृष्ण थे। सूरदास ने [illegible] या आदर्श [illegible] के द्वारा कवियों में से [illegible] प्रति काम इसी प्रेममूर्ति कृष्ण का कीर्तन [illegible] करना था। इसी समय निर्गुणियों सन्तों द्वारा ज्ञान योग का भी प्रचार बढ़ रहा था। जो सगुण भक्ति धारा के विरुद्ध था जो सगुण भक्ति धारा के। इसका स्पष्ट प्रमाण भक्ति धारा के [illegible] गोपियों से उद्धव कहते हैं कि सूरदास ने गोपियों जिन्हें अपने ज्ञान की हारी उधो की बातों जिन्हें अपने ज्ञान के रूप में समझाया है बातों के अंतिम उत्तर

"बार-बार मैं वचन निवारो।
भक्ति विरोधी ज्ञान तिहारो।।"

अतः स्पष्ट है कि सूरदास इस भक्ति विरोधी ज्ञान के विरोधी हैं और उन्होंने भ्रमरगीत की रचना अपने साम्प्रदायिक सिद्धांत के महत्व प्रतिपादन के निमित्त की है।

आचार्य शुक्ल का विचार है निर्गुणोपासना की नीरसता और अग्राह्यता दिखाकर उपासना का हृदयग्राही स्वरूप सामने लाना ही सूरदास का मुख्य उद्देश्य था। उन्होंने लिखा है कि " इस विलीन उपदेश से लोक व्यवहार कैसे चल सकता है। भक्ति वाले क्यों चलें संसार। इस विलीन उपदेश किस प्रकार आदर नहीं करते। यह विचारों को 'भ्रमरगीत' की रचना में हुई है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भ्रमरगीत की रचना में सूरदास का प्रमुख उद्देश्य निर्गुण का खण्डन सगुण का मण्डन तथा ज्ञान की अपेक्षा भक्ति की ~~अपेक्षा~~ श्रेष्ठता का प्रतिपादन है।

इस खंडन मंडन की प्रवृत्ति के हेतुओं का संकेत करते हुए आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने कहा है कि " यह तत्कालीन ढोंग ज्ञान के प्रति थी जिसका उच्छेद करने के लिए सूर ने सागर की ये उत्ताल तरंगें लहराईं"। ज्ञान योग की साधना वस्तुतः अधिक कठिन है। सूरदास ने ज्ञान योग के प्रतिपक्ष में प्रेम योग का महत्व प्रतिपादित करते हुए यह प्रतिपादित किया कि भक्ति की भी बड़ी परमावश्यकता है जो ज्ञान की —

Scanned with CamScanner

"ऊधो हौ आसान ! ज्ञान उपदेसन ज्ञान रूप हमारी।
निसि दिन ध्यान सूर प्रभु को अलि ! देखत जित तित ही"

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र ने ज्ञान योग की कठिनता की ओर गोपियों के संकेत देते हुए लिखा है कि — "ज्ञान की कोरी व्याख्या और योग की साधनात्मकता की यदि साधारण लोगों में विशेष प्रचार हो जाय तो अव्यवस्था फैलने लगती है। निर्गुण पक्ष ईश्वर की अनिर्वचनीयता, मन बुद्धि की शून्यता एवं अव्यक्त की एकता आदि को लेकर आगे बढ़ा जिस पर चल कर साधक ज्ञानता ज्ञान की अनाद बातें और योग के हठ, अभ्यासों में लग कुछ मानसिक तथा हठ अहंकार आदि प्रवृत्तियों में उलझने लगी।

भ्रमरगीत में सूरदास ने निर्गुण और सगुण का खण्डन मण्डन इन दोनों आदर्शों को ध्यान में रखकर किया है। सूर ने योग मार्ग या ज्ञान को संकीर्ण, कठिन और नीरस कहा है तथा भक्ति मार्ग को विशाल सरल और सरस कहा है। ज्ञान या योग का अभ्यासी विश्व की विभूति से अपनी दृष्टि समेट कर अनेक हो जाता है। फलस्वरूप गार्हस्थ्य एवं उल्लास की सृष्टि होती है। परन्तु भक्ति का बहिर्मुख रहता है। वह ज्ञान की विभूति, मंगल, शील, अंगादिगत रूपों में अपनी दृष्टि रमाये रहता है। उसके लिए सब कुछ सुलभ हुआ है इसलिए वह पुराण हिंसा से दूर रहता है। इस प्रकार भक्ति का राजमार्ग चौड़ा, निष्कंटक और सीधा है, उसमें जीवन स्वरूप का उल्लास भरा है। गोपियाँ कहती हैं —

Scanned with CamScanner

मन को रमाने का जैसा अवसर भक्ति भावना में
है वैसा अन्य साधना में नहीं। कल्याण का मार्ग
अति व्यापी नहीं, बल्कि व्यापी सत्ता से जुड़ता है।
" बुधि नहीं कृपाल सब ठौर कहत जिमि सामान
निकसि क्यों न गोपाल को हत, कुटिल के कुलपाल।"
चूँकि निर्गुणोपासना निराधार
होती है मन को चक्कर में डालती है। निरालम्ब
मन चक्कत धावै"। इसलिए इसको नीरस भी
कहा गया है —

"ऊधो! कहा जोग में नीको?
तजि रसना रीति अनूप नैनन की निरखत निर्गुन फीको
सुनि रहे गुरु कौन कहाँ बासि, कौन सुने मन थी की॥"

इस प्रकार स्पष्ट है कि
सूरदास ने निर्गुण के आदर्शों को "निरालम्ब"
नीरस तथा निर्मूल कहकर उसका प्रतिवाद
किया है। गोपियाँ कहती हैं —
" यह निर्गुण निर्मूल गठरी ऊधो किन करहु खरी"
सार में जिस बात को कहा
मार्मिक ढंग से कहा है उसी को गोस्वामी तुलसी
दास ने दार्शनिक विवेचना के ढंग पर
स्वानुभूति और बाह्य ज्ञान का भेद बताकर
कहा है —

{"वाक्य ज्ञान अत्यंत निपुन भव पार न पावै कोई
निसि गृह मध्य दीप की बातन तम निवृत्त नहिं होई"

ज्ञान या योग साधना के
मानसिक पक्ष अर्थात् बुद्धि तत्व की प्रधानता है
और दूसरा पक्ष जैसा है किन्तु प्रतीति स्वभाव
के कारण कोरी बुद्धि की क्रिया से नहीं होता यह
बात शंकराचार्य जैसे प्रखर बुद्धि वाले
व्यक्ति को भी माननी पड़ी थी परमार्थिक
सत्ता की बोध की सम्भावना उन्होंने बहुत कुछ
स्वानुभूति द्वारा कही है केवल शब्द बोध या
तर्क द्वारा नहीं।

वर्तमान समय का बहुत आगे बढ़ा हुआ दार्शनिक बर्गसान (Bergson) बुद्धि क्रिया की निन्दा करता [illegible] ज्ञान और आत्मज्ञान बताकर स्वानुभूति की ओर संकेत कर रहा है। प्रसिद्ध कारपेन्टर ने भी अपनी पुस्तक [illegible] पुस्तक "Civilisation its Causes and Cure" में वर्तमान समय की इस वैज्ञानिक प्रगति का विरोध किया है जिसमें बुद्धि क्रिया की [illegible] आती है मानी जाती है। भारतीय ने तर्क पक्ष तथा स्वानुभूति पक्ष का बिलकुल तिरस्कार कर दिया है। इसलिए शास्त्र बोध की प्रणाली से ज्ञान प्रणाली [illegible] आदि मार्गों का [illegible] तुलसीदास ने स्पष्ट कह दिया है कि "ज्ञान [illegible] [illegible] से बातें कही जाती हैं — ज्ञान के [illegible] तुलसीदास"। इस प्रकार ज्ञान बिना भी [illegible] तुलसीदास का उद्देश्य वैज्ञानिक [illegible] भी [illegible] का प्रतिपादन है जिसमें भावुक के महत्व का प्रतिपादन है जिसमें तत्त्व पक्ष की प्रधानता है।

आज साहित्य की [illegible] में [illegible] विचार किया जाय तो साहित्यिक [illegible] से भी [illegible] का उद्देश्य [illegible] है। [illegible] जिसमें [illegible] [illegible] का भी महत्व है। लेकिन भारतीय साहित्य [illegible] [illegible] भावित रहा, भौतिक को [illegible] मानकर भी भावित प्रकृति [illegible] है। प्रकृति [illegible] है [illegible] बहुत पहले घोषित कर दिया था कि "प्रकृति [illegible] [illegible]"

[illegible] [illegible] [illegible] ने

Scanned with CamScanner

सूरदास ने इन प्रकृति वाली साहित्य के परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए भगवान के बाल रूप को लेकर किये लीलाओं की कल्पना के द्वारा प्रकृति भावों को प्रकट किया गया है। यह रचना का प्रयोग किया है, सूर के लीला प्रसंगों के अनुरूप साहित्य की भाषा मानक और सरल तल्लीन है।

समाप्त